THE TIMES OF INDIA

Date: 17-07-20

What's The Plan?

Sharp demographic changes lie ahead. Forget other preoccupations and focus on economy

TOI Editorials

A new study in Lancet projecting India's population peaking much earlier than expected, at 1.6 billion in 2048 before declining to 1.09 billion in 2100, points to a narrowing window for demographic dividend. Similar trends of population decline have been forecast for much of the world, except sub-Saharan Africa. China's population will halve to 732 million by 2100 along with 17 European countries and some East Asian ones. India's working age population, at 762 million in 2017, will peak at around 1.1 billion between 2040 and 2050 before sharply plummeting to 578 million by 2100.

The implications of these demographic trends are far reaching. Sharp falls in working age population will require many countries to pursue liberal immigration policies or alternatively improve workforce participation rate among women and elderly. Labour productivity improvements demand increased investments in education and healthcare. Countries unable to stabilise their working age population are priming themselves for economic stagnation. The biggest challenge will be to sustain large public social security nets without overburdening a smaller workforce with higher taxes.

For India, struggling with a sustained economic slowdown that has killed jobs, pushing the long awaited second generation of economic reforms cannot wait longer. Powered by a young workforce, India must utilise the narrowing window to lay a strong economic foundation and robust infrastructure built to last a 100 years or so. India's inability to invest in human capital for the masses will hurt as developments in AI, robotics and telecom change the nature of skilled and unskilled labour. Social and economic policies can no longer afford to exclude women. Both female workforce participation rate and female sex ratio at birth have slipped this decade. Focus on jobs, schools, hospitals and environment. Everything else in Indian politics is noise. Cultural identity wars are oversold, and counterproductive.

Date: 17-07-20

Tech Tonic

Strategic investments by global tech companies is heartening. Regulators must up their game

TOI Editorials

One Indian company stood out during the lockdown and attendant economic gloom. Reliance Industries announced that it has raised a cumulative Rs 2.12 lakh crore through a variety of channels over the last few months. Of particular interest is the strategic partnership with global technology giants Google and Facebook, backed by their investment in its technology arm Jio Platforms. Facebook in April announced it would take a 9.9% stake in Jio for Rs 43,573 crore. This week RIL's chairman Mukesh Ambani said that Google would not only invest Rs 33,737 crore but also collaborate on developing an entry level Android smartphone.

The salient feature here is that it highlights the potential of the Indian market for global technology giants and the talent pool it offers which can be tapped for designing products that could potentially be exported too. In this context, Reliance also announced that it has developed a complete 5G solution from scratch. The unusual development of two technology giants partnering the same Indian company gives us a pointer where we are headed. Jio, in line with the global trend, is evolving into a platform which will bundle many applications to meet multiple needs of customers.

Bundling by large technology platforms introduces a level of efficiency in service provision that was unavailable earlier. Simultaneously, it introduces a regulatory challenge that is altogether new. For example, even as bundling brings in efficiency, regulators the world over grapple with the challenge of gauging when it begins to thwart competition. Disruption in technology emerges in niche areas. Bundling may disadvantage a stand-alone product and take us down the road to monopoly. India's policy makers have to figure out how to keep competition bubbling without undermining natural market evolution.

In this context a recent report by a government appointed committee, headed by former Infosys chief S Gopalakrishnan, is instructive. Data is at the heart of technology businesses. As the committee pointed out, there's a strong case to ensure anonymised non-personal data remains openly accessible to encourage startups. It makes the case for a non-personal data regulator to keep markets competitive. At the same time, the government needs to get cracking on an improved version of the personal data protection bill, that will uphold the Supreme Court judgment that privacy is a fundamental right in letter as well as in spirit.

दैनिक भास्कर

Date: 17-07-20

संकट में कृषि ही आर्थिक विजय रथ की सारथी

संपादकीय

अर्थ-व्यवस्था के 3 क्षेत्रों, कृषि व संलग्न कार्य उद्योग, विनिर्माण व खनन और सेवा क्षेत्र में सबसे अधिक नजर अंदाज कृषि क्षेत्र आज कोरोना संकट में भारत का खेवनहार बन रहा है। पिछले हफ्ते केंद्र द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार किसानों ने खरीफ का रकबा (खेती का क्षेत्र) आशातीत रूप से 40% बढ़ाया है। बिहार, मध्यप्रदेश में खूब खेती हो रही है। ध्यान रहे कि तीसरे योजना-काल (1962-67) के अंत में देश में कुल खेती 14 करोड़ हेक्टेयर में होती थी, जो आज भी लगभग उतनी ही है। लेकिन इस वर्ष कुक्कुट उद्योग ध्वस्त होने, मक्का की कीमत घटने के बावजूद मक्का बुवाई क्षेत्र दूना हुआ है। यही स्थिति धान, तिलहन व दलहन की भी है, जिनका रकबा असाधारण रूप से बढ़ा है। देश के कुल मक्का उत्पादन का 80% देश के एक राज्य में होता है। सरकारी सुस्ती से 1725 रु. के समर्थन मूल्य के बावजूद खरीद नगण्य रही। अत: किसानों को मक्का खुले बाजार में आधे दामों में बेचनी पड़ी है। गुजरात व अन्य राज्यों में भी कपास का रकबा बढ़ा है। मप्र ने पिछले साल गेहूं की खेती का रकबा अचानक 32% बढ़ाया। नतीजतन यह राज्य पहली बार पंजाब को पीछे करते हुए, बड़ा गेहूं उत्पादक राज्य बना। राज्य सरकार आगे बढ़े, ताकि किसानों की उत्पादकता को, जो कि पंजाब के (50.08 क्विंटल प्रति हेक्टेयर) के मुकाबले मात्र 32.98 क्विंटल है, बेहतर करे। इसके लिए बेहतर खाद्य-प्रबंधन, उन्नत बीज व नई तकनीक उपलब्ध कराना राज्य की जिम्मेदारी है। बारिश की मेहरबानी से किसान उत्साहित हैं , विशेषज्ञों कि मानें तो, अगर कोई बड़ी प्राकृतिक आपदा न आई, तो देश की अर्थव्यवस्था को सिर्फ कृषि ही ऊपर उठा देगी। हालांकि अभी तक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों की रिपोर्ट है कि भारत की जीडीपी दर ऋणात्मक होने के साथ, 6.1 फीसदी तक गिर सकती है। अब सरकार देखे कि अति-उत्पादन से किसानों के उत्पाद का मूल्य जमीन पर न आएं। इसका एक ही विकल्प है- निर्यात।

दैनिक जागरण

Date: 17-07-20

नए आर्थिक ढांचे की दस्तक

जीएन वाजपेयी , (लेखक सेबी और एलआइसी के पूर्व चेयरमैन हैं)

कोरोना वायरस के बढ़ते संक्रमण और मृतकों की संख्या में वृद्धि के साथ ही कोविड-19 महामारी अपना प्रकोप बढ़ाती जा रही है। तमाम लोग इससे विचलित हो गए हैं। मानव ने प्रकृति को जो गंभीर क्षति पहुंचाई, यह संकट मानव पर प्रकृति के कोप की अभिव्यक्ति प्रतीत होता है। सभी इससे उबरने के उपक्रम में लगे हैं। सरकारें मशक्कत कर रही हैं। केंद्रीय बैंक भी जुटे हैं। उनका प्रयास है कि जीवन और आजीविका की हर हाल में सुरक्षा की जाए। इस परिदृश्य में स्वास्थ्यकर्मी नए मसीहा के रूप मे उभरे हैं जो उम्मीद की मशाल थामे हुए हैं। फिलहाल मानवता और आम जनजीवन को बचाने की ही जद्दोजहद की जा रही है। इस दौरान वैज्ञानिक शोध की दशा-दिशा भी काफी कुछ बयान करती है। अब तक इस महामारी पर करीब 7,000 से अधिक शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं। ये शोध पत्र वाइरोलॉजी से लेकर एपिडेमियोलॉजी जैसे विषयों पर प्रकाशित हुए हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन यानी WHO के अनुसार इस समय करीब 110 फॉर्मुलेशन परीक्षण के विभिन्न चरणों में हैं जिनमें वैक्सीन के मानवीय परीक्षण जैसी पहल भी शामिल हैं। इसके बावजूद तमाम प्रख्यात विज्ञानी इस पहलू को लेकर भी चेता रहे हैं कि हमें इस वायरस के साथ जीना सीखना होगा, क्योंकि एचआइवी की तरह कोविड-19 की भी शायद कभी पूरी तरह से विदाई न हो पाए। लिहाजा सभी का पूरा ध्यान पूरी तौर पर जैव-विज्ञानी समुदाय पर लगा हुआ है।

आधुनिक मानव यानी होमो सेपियंस के विकास और कल्याण में अर्थशास्त्र ने अहम भूमिका निभाई है। जीवन आर्थिक ढांचे पर सवार होकर प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ता गया। इसका आगाज शिकार करने और जमा करके रखने वाली अर्थव्यवस्था के साथ हुआ। मानव जंगली जानवरों के आखेट, मछली पकड़ने, कंदमूल, सब्जियां और मेवे इकट्ठा करने पर ही पूरी तरह निर्भर रहा। इसने सैकड़ों और हजारों वर्षों तक जीवित रहने, आजीविका और संपन्नता को सहारा दिया। साथ ही कृषि की खोज की ओर भी उन्मुख किया। फिर कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का प्रभुत्व भी करीब 10,000 वर्षों तक कायम रहा। इसने समाज-समुदाय, पर्यावास और सभ्य जीवन की बुनियाद रखी। वस्तु विनिमय प्रणाली के आविर्भाव के साथ अधिशेष एवं न्यूनता के बीच जीवन में संतुलन साधने वाली व्यवस्था ने औपचारिक रूप ग्रहण किया। भंडारण और सामुदायीकरण ने सामूहिकता को सुगम बनाया। करीब तीन हजार साल पहले पहिये के आविष्कार और उसके बाद भाप के इंजन और बारूद की खोज ने विश्व अर्थव्यवस्था की काया ही पलट कर रख दी। इसने औद्योगिक अर्थव्यवस्था को जन्म दिया। इससे उत्पादकता में भारी बढ़ोतरी हुई। मूल आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का उत्पादन संभव हुआ। इसने समूह और शहरीकरण को जन्म दिया। वहीं भौगोलिक विस्तार और उपनिवेशीकरण भी शुरू हुआ। इससे शक्ति का संतुलन बदल गया। शक्ति राजसत्ताओं के हाथ से फिसलती गई और आधुनिक राष्ट्र राज्य की व्यवस्था अस्तित्व में आई। मगर सूचना अर्थव्यवस्था ने महज दो शताब्दियों के दौरान औद्योगिक अर्थव्यवस्था को बौना बनाकर रख दिया। सूचना अर्थव्यवस्था ने डिजाइन, मैन्युफैक्चरिंग और मार्केटिंग में नए तौर- तरीकों से मेल कराया। इससे ग्लोबल वैल्यू चेन का सृजन हुआ। इसने हर काम में लगने वाले समय को घटा दिया और दायरे को बढ़ा दिया। इससे संभावनाएं बढ़ती ही गईं। लागत भी घट गई। इससे दूरियां पटती गईं। इसने बाजारों को जोड़ दिया। पूरा का पूरा विश्व एक गांव में सिमट गया। ज्ञान का लोकतांत्रीकरण हुआ। विरोधी स्वरों को जगह मिली और तार्किक स्वरों को प्रोत्साहन मिला। इसने उपभोग को बढ़ाया। आराम और सुकून को बढ़ाकर आनंद में वृद्धि की और अब आनंद की इस खोज ने उन्माद का रूप धारण करके पृथ्वी को ही विनाश की ओर धकेल दिया है। वास्तव में इस महामारी का आकार, प्रकार और विस्तार सूचना अर्थव्यवस्था का ही एक अनपेक्षित परिणाम है।

पृथ्वी पर मानव जाति का अस्तित्व ही खतरे में है। हालांकि मानव का इतिहास उनकी अद्वितीय क्षमता को ही दर्शाता है कि वे कैसे आपदा से उबर लेते हैं। उसने संज्ञानात्मक क्रांति से लेकर सूचना विस्फोट तक के दौर में बचाव के लिए नए हथियार विकसित कर लिए। अब जबसे मानवीय खोजों का पूरा जोर जीव-विज्ञान पर लग गया है तबसे पूरा ध्यान और

संसाधन आवंटन की दिशा भी जीव-विज्ञान की ओर हुई है। इससे लगता है कि उसे सूचना अर्थव्यवस्था पर बढ़त मिल जाएगी। जब आर्थिक ढांचा बदलता है तो पुराना ढांचा यकायक गायब नहीं हो जाता। वह सहायक भूमिका में आ जाता है और उसके द्वारा सृजित की जाने वाली संपदा भी घट जाती है। कृषि एवं औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं का अस्तित्व अभी भी है, परंतु वैश्विक संपदा सृजन में उनका योगदान कम हो गया है। किसी अर्थव्यवस्था के प्रतिनिधि उपक्रमों की संपदा में परिवर्तन का सीधा एवं आनुपातिक संबंध उस आर्थिक ढांचे के दर्जे से जुड़ा है। अमेजन, एपल, अल्फाबेट और अलीबाबा का मूल्यांकन इस अनुमान की पुष्टि करता है।

जैव-अर्थव्यवस्था की मेहरबानी से अस्तित्व बचाए रखने के अलावा और भी विकल्पों पर गौर किया जा रहा है। इसमें एक तो पृथ्वी से परे किसी अन्य ग्रह पर जीवन की संभावनाएं तलाशने से जुड़ा है। इस कड़ी में एलन मस्क के स्वामित्व वाली स्पेस एक्स इस साल अंतरिक्ष में मानव को भेजने वाली पहली निजी कंपनी बनने जा रही है। जैव-अर्थव्यवस्था का घटनाक्रम पहले ही अनोखे परिणाम दे रहा है। यह प्रजनन क्षमता के साथ ही जीवन की गुणवत्ता और उसे लंबा बनाने में क्रांतिकारी भूमिका निभा रहा है। डीएनए मैपिंग हो या जन्म के समय प्लेसेंट्रा को संरक्षित रखना, मानवीय अंगों की 3डी मैपिंग और एडवांस प्रोस्थेटिक्स, ये उपचार के परिदृश्य का कायापलट कर रहे हैं। बायोनिक मानवीय रूप का सृजन निकट भविष्य में संभव है। अमरता से जुड़ी परियोजनाएं अब कल्पना मात्र नहीं रह गई हैं। दुनिया के सबसे अमीर लोगों की अगली कड़ी जैव-अर्थव्यवस्था से उभरेगी। आर्थिक नायकों की नई लहर जीव-विज्ञानियों से ही निकलेगी। वे दृश्यमान, मुखर और पूजनीय होने के साथ ही सुर्खियों में भी छाएंगे।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 17-07-20

भारत में एफडीआई प्रवाह के रुझान पर एक नजर

ए के भट्टाचार्य

लगातार तीन वर्षों (2016-17 से लेकर 2018-19) तक भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) के प्रवाह में एक अंक की वृद्धि दर्ज की गई। यह एक आश्चर्य था। नरेंद्र मोदी सरकार के पहले कार्यकाल के शुरुआती वर्षों में इसके मंत्री देश के भीतर एफडीआई प्रवाह में आई तेजी के लिए अक्सर अपनी उपलब्धियों का जिक्र करते रहते थे। वर्ष 2014-15 में एफडीआई प्रवाह 25 फीसदी बढ़कर 45 अरब डॉलर रहा था और 2015-16 में यह फिर से 23 फीसदी की उछाल के साथ 56 अरब डॉलर पर पहुंच गया था। लेकिन मोदी सरकार के इन शुरुआती दो वर्षों के बाद एफडीआई प्रवाह के मामले में किस्मत का साथ मिलना मानो बंद हो गया। वर्ष 2016-17 में एफडीआई वृद्धि केवल 8 फीसदी और उसके अगले साल 1.2 फीसदी ही रही। हालांकि 2018-19 में थोड़े सुधार के साथ एफडीआई प्रवाह में 1.7 फीसदी की बढ़त देखी गई और यह 62 अरब डॉलर रहा। इस दौरान भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की वृद्धि में भी गिरावट का रुख देखा गया। वर्ष 2016-17 में 8.3 फीसदी पर रही वृद्धि दर 2017-18 में 7 फीसदी और 2018-19 में 6.1 फीसदी ही रही।

लेकिन एफडीआई प्रवाह में बड़ा बदलाव वर्ष 2019-20 में देखा गया जो मोदी के दूसरे कार्यकाल का पहला साल था। भले ही जीडीपी वृद्धि 2019-20 में 4.2 फीसदी पर लुढ़क गई लेकिन एफडीआई प्रवाह 18 फीसदी की तीव्र वृद्धि के साथ

73 अरब डॉलर रहा। ऐसा होने की क्या वजह थी? आर्थिक वृद्धि के गिरावट वाले साल में जब निर्यात में भी कमी दर्ज की गई थी, एफडीआई प्रवाह किन वजहों से बढ़ा?

सरकार एफडीआई प्रवाह के रूप में चार अवयवों की वर्गीकृत करती है- एफडीआई इक्विटी, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा स्वीकृत एफडीआई आवेदन, इक्विटी पूंजी प्रवाह एवं पुनर्निवेशित आय और अन्य पूंजी। इन सभी श्रेणियों में पिछले साल तेजी देखी गई लेकिन एफडीआई इक्विटी एवं अन्य पूंजी श्रेणियों में अधिक उछाल रही। इक्विटी निवेश 13 फीसदी बढ़कर करीब 50 अरब डॉलर रहा जबकि अन्य पूंजी श्रेणी 150 फीसदी की जबरदस्त छलांग के साथ 8 अरब डॉलर रही। अनिगमित इकाइयों में इक्विटी प्रवाह भी बढ़ा लेकिन उसकी राशि महज 1.2 अरब डॉलर ही थी। पुनर्निवेशित आय भी 3 फीसदी की सुस्त दर के साथ 14 अरब डॉलर रही थी।

पुनर्निवेशित आय में वृद्धि की अपेक्षाकृत धीमी दर चिंता का विषय है क्योंकि यह विदेशी निवेशकों के मन में विश्वास की कमी को दर्शाता है और वे मौजूदा उद्यमों से होने वाली आय या लाभांश को निकालने लगते हैं। यह भी हो सकता है कि रिटर्न इतनी तेजी से नहीं बढ़ रहे थे कि निवेशक अपनी आय को दोबारा निवेश करने के बारे में सोचें।

लेकिन अधिक उलझाने वाला पहलू अन्य पूंजी में आई 150 फीसदी की उछाल है। इस श्रेणी में मोटे तौर पर वरीय पूंजी जैसे अद्र्ध-इक्विटी साधनों के जरिये हुआ निवेश शामिल होता है। एक साल में ही निवेश की इस श्रेणी में इतनी तेजी क्यों आई? सरकार ने स्पष्ट किया है कि अन्य पूंजी के संदर्भ में आंकड़ा पिछले दो वर्षों के औसत के आधार पर जारी होता है। वर्ष 2017-18 और 2018-19 में अन्य पूंजी प्रवाह क्रमश: 2.91 अरब डॉलर और 3.27 अरब डॉलर रहा था। फिर 2019-20 में इस श्रेणी में इतनी अधिक उछाल कैसे आ गई? इसकी एक व्याख्या सरकारी आंकड़ा संकलन व्यवस्था में हुआ व्यापक बदलाव हो सकती है। जब 2018-19 में हुए अन्य पूंजी प्रवाह के आंकड़े पहली बार जारी किए गए थे तो यह 64.37 अरब डॉलर के कुल एफडीआई प्रवाह में 5.74 अरब डॉलर था। एक साल बाद इस साल के अन्य पूंजी प्रवाह को संशोधित कर 3.27 अरब डॉलर कर दिया गया। इसकी वजह से उस साल का कुल एफडीआई प्रवाह भी घटकर 62 अरब डॉलर पर आ गया था।

अधिक संभावना यह है कि 2019-20 के दौरान के अन्य पूंजी प्रवाह को आगे चलकर संशोधित कर दिया जाए। ऐसा होने पर पिछले वित्त वर्ष का कुल एफडीआई प्रवाह भी कम हो जाएगा।

बहरहाल, भारत के एफडीआई प्रवाह के आंकड़ों से तीन प्रमुख रुझान दिखाई देते हैं। पहला, भारत का चीन से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 2019-20 में कम हुआ है और यह दोनों देशों के रिश्तों में आई तल्खी से पहले की बात है। वर्ष 2018-19 में चीन से भारत में 1.23 अरब डॉलर का एफडीआई आया था लेकिन 2019-20 में यह घटकर महज 0.16 अरब डॉलर रहा। इस दौरान हॉन्ग कॉन्ग से भारत में एफडीआई 0.59 अरब डॉलर से बढ़कर 0.69 अरब डॉलर हो गया।

दूसरा रुझान, भारत में एफडीआई के स्रोत के तौर पर मॉरीशस की भूमिका कम हुई है। भारत और मॉरीशस के बीच दोहरे कर से बचने के लिए हुई संधि के चलते एफडीआई इस देश के रास्ते से होता रहा है लेकिन 2016 में इस संधि को संशोधित किए जाने के बाद कम दरों का लोभ नहीं रह गया है। पिछले दो वर्षों से मॉरीशस भारत में एफडीआई का प्रमुख जरिया नहीं रहा है। उसके पहले तो मॉरीशस ही हर साल एफडीआई का प्रमुख उद्गम स्थल हुआ करता था। अब यह स्थान सिंगापुर ने ले लिया है और मॉरीशस की हिस्सेदारी सिंगापुर की आधी रह गई है।

तीसरे रुझान का ताल्लुक कर से बचाव करने वाले केमैन आइलैंड के उदय से है। वहां से एफडीआई प्रवाह पिछले कुछ वर्षों में तेजी से बढ़ता रहा है। वर्ष 2018-19 में यह 3.7 अरब डॉलर रहा। नीदरलैंड भी कम कर दरों की वजह से जाना जाता है और वहां से भी भारत में एफडीआई प्रवाह 2019-20 में बढ़कर 6.7 अरब डॉलर रहा।

सरकार ने अपनी एफडीआई नीति की समग्र समीक्षा करने की घोषणा की है। इन प्रवृत्तियों की गहन पड़ताल जरूरी है ताकि अधिक टिकाऊ तरीके से विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने वाले कदम उठाए जा सकें।

जनसत्ता

Date: 17-07-20

श्रमबल में घटती महिला भागीदारी

लालजी जायसवाल

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी बहुत मायने रखती है। इसके बावजूद भारत में महिला कार्यबल की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। वर्ष 2018 के सामाजिक कार्यबल सर्वेक्षण में 71.2 फीसद कामकाजी पुरुषों की तुलना में पंद्रह वर्ष से अधिक उम्र की केवल बाईस फीसद महिलाएं कामकाजी थीं। वहीं नार्वे और स्वीडन जैसे देशों में चार में से तीन महिलाएं औपचारिक कार्यबल का हिस्सा हैं। भारतीय महिला श्रमिकों के औपचारिक कार्यबल में भागीदारी में कमी के पीछे पितृसत्तात्मक पारिवारिक संरचना की जकड़ है, जिसके कारण उनके शिक्षा में कमी, अपेक्षित कौशल में कमी, स्वास्थ्य देखभाल में कमी के साथ घरेलू कामकाज तक सीमित रहना होता है।

महिलाओं के लिए सुरक्षित कार्यबल का अभाव, मातृत्व सुविधाओं का सही न होना और लैंगिक भेदभाव होना आम समस्या है। जैसे कि भारत में एक चौथाई से अधिक महिलाएं कड़ी मेहनत करने के बाद भी अपने काम का सही मेहनताना नहीं पाती हैं। उन्हें पुरुषों की अपेक्षा पैंतीस फीसद कम वेतन मिलता है। ये कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कारक हैं, जिसके चलते महिलाओं की औपचारिक श्रमबल में भागीदारी का मनोबल तोड़ने का काम करता है। यही बजह रही है कि भारत आज भी लैंगिक समानता सूचकांक के स्तर पर जमीन में पड़ा धूल फांक रहा है। लैंगिक समानता रिपोर्ट के मुताबिक भारत विश्व के एक सौ तिरपन देशों की सूची में एक सौ बाईसवें स्थान पर है। वहीं अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की महिला सूची में एक सौ इकतीस देशों में भारत का स्थान एक सौ इक्कीसवां है।

भारत में महिलाओं के कम कामकाजी होने के पीछे अनेक कारण गिनाए जा सकते हैं। राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वेक्षण से इस बात का खुलासा हुआ है कि कुल महिला आबादी में से आधी से अधिक महिलाओं को अकेले कहीं आने-जाने की छूट नहीं होती है। ऐसे में महिलाओं के कामकाजी होने की बात कैसे कही जा सकती है?

पिछले चार वर्षों में रोजगार के अवसरों में बेहद कमी देखी गई है। हाल ही में अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन ने चेतावनी दी थी कि कोरोना महामारी से दुनिया भर में सभी अर्थव्यवस्थाओं को धक्का लगा है और बेरोजगारी बढ़ी है, जिसमें महिला कर्मचारियों पर ज्यादा असर पड़ा है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था ने एक रिपोर्ट में कहा है कि उनतीस साल से कम उम्र के

हर छह में से एक या एक से ज्यादा व्यक्तियों ने काम बंद कर दिया है। जैसा कि माना जा रहा था कोविड-19 के कारण लागू देशव्यापी लॉकडाउन ने बेरोजगारों की तादाद में भारी इजाफा किया है, सीएमआइई आंकड़ों के मुताबिक बेरोजगारी दर बढ़ कर 21.1 फीसद पर पहुंच गई है। कोविड-19 के बाद आने वाली मंदी में महिलाएं और बड़ी शिकार बन कर उभरेंगी।

फिलहाल किसी तरह के रुझान का पता लगाना मुश्किल है, क्योंकि नौकरी जाने पर महिलाएं आसानी से पारिवारिक जीवन में खप जाती हैं। शायद यह भी एक वजह है कि इन महिलाओं की बेरोजगारी के खिलाफ कोई सार्वजनिक विरोध प्रदर्शन नहीं होता। अगर देश के गरीबों और निम्न मध्यवर्ग की सामाजिक रूढ़िवादिता को ध्यान में रखें तो कह सकते हैं कि देश में लैंगिक अंतर कम होना दूर की कौड़ी है। हम सभी जानते हैं कि महिलाएं सारे काम करने में सक्षम हैं, लेकिन नियोक्ता उनके साथ भेदभाव करते हैं। ओड़ीशा और केरल जैसे राज्यों में महिलाओं की बड़ी संख्या ने कार्यकुशलता का प्रतिमान स्थापित किया, जिसमें मास्क से लेकर सेनेटाइजर बनाने और कमजोर घरों को राशन के साथ अन्य जरूरी सामान पहुंचाने का कार्य शामिल है। स्पष्ट है कि अगर महिलाओं को उचित अवसर मिले, तो वे अपने हुनर से रोजगार लेने के बजाय देने वाली बन सकती हैं।

मगर चिंता की बात तो यह है कि नीति निर्माताओं का ध्यान इस ओर नहीं जाता है, जिसका परिणाम यह हुआ कि आज भी देश की कुल महिला आबादी में से केवल एक तिहाई महिलाएं श्रमबल का हिस्सा बन पाई हैं। रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 2015 में श्रमिक पुरुषों की भागीदारी जहां 75.5 फीसद थी, वहीं वर्ष 2016 में बढ़ कर 76.8 फीसद हो गई थी, लेकिन महिलाओं की स्थिति चिंताजनक ही रही है। 2015 में महिलाओं की भागीदारी जहां 27.4 फीसद थी, वहीं 2016 में घट कर 26.9 फीसद रह गई।

कोरोना के चलते भारत में भी बेरोजगारी दर कई पायदान ऊपर चढ़ गई है। बीते मार्च में यह अब तक के सबसे निचले स्तर पर पहुंच गई है। बेरोजगारी दर पहली दफा दोहरे अंक में प्रवेश कर गई है। रिपोर्ट के अनुसार विश्व (चीन को छोड़ कर) में कोरोना वायरस महामारी के कारण सबसे अधिक प्रभावित हुए क्षेत्रों के चौवालीस करोड़ कर्मचारियों में बेरोजगारी का सामने करने वाली महिलाओं की संख्या इकतीस करोड़ है। संयुक्त राष्ट्र की एक एजेंसी के अनुसार कोरोना महामारी के कारण दुनिया भर में नौकरी-पेशा लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा और भारत से ही करीब ढाई करोड़ नौकरियां खत्म हो सकती हैं, जिसमे सबसे अधिक महिलाएं प्रभावित होंगी।

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार अवैतनिक घरेलू कामों के प्रति पूर्वाग्रह के कारण हमारे देश में लैंगिक असमानता को ठीक करना अत्यंत दुष्कर सिद्ध हो रहा है। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या महिला रोजगार में लगातार कमी और महिलाओं की श्रमबल में गिरावट चिंता का कारण नहीं है? गौरतलब है कि कृषि प्रधान देश में आज भी महिलाओं की एक बड़ी संख्या कृषि कार्य में लगी हुई है, इसके बावजूद ग्रामीण महिलाओं की एक बड़ी संख्या बेरोजगार है। अब सवाल है कि ग्रामीण महिलाएं जब श्रमबल में नहीं हैं, तो ये काम क्या कर रही हैं? छिपी बात नहीं है कि गांव की अधिकतर महिलाओं का समय बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल में जाता है। इसी सामाजिक संरचना की वजह से स्त्री और पुरुष के बीच असमानता की खाई लगातार चौड़ी होती जा रही है। नीति निर्माता भी उसी पारंपरिक जड़ता से ग्रसित हैं, जिससे समाज ग्रसित है। समाज की मानसिकता आज भी पुरुषों को सबसे ऊपर रखने की बनी हुई है। ऐसे में उद्योग-धंधे और कार्यस्थलों के बंद होने का गंभीर परिणाम महिलाओं को झेलना पड़ रहा है।

मगर भारत जैसे **देश में महिला श्रमबल भागीदारी को सही मायनों में अर्थव्यवस्था के विकास का इंजन कहा जाए,** तो **अतिशयोक्ति न होगी। महिला श्रमबल की उचित भागीदारी बढ़ा कर हम देश को तीव्र विकास की ओर ले जा सकते हैं।** लेकिन सबसे पहले महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्र में उनकी भागीदारी को बढ़ाना होगा, इसके लिए नियम-**कानूनों में बदलाव की दरकार होगी। समाजशास्त्री मेरीलैंड ने अपने शोध में पाया है कि** जिन गांवों में सड़क के निर्माण कार्य हुए हैं, वहां पर महिलाओं की तुलना में पुरुषों की संख्या ज्यादा रही है, यहां **महिलाओं की अधिक भागीदारी बढ़ाई जा सकती है।**

आने वाले दशक में पर्यटन, **शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में सबसे अधिक रोजगार उत्पन्न होने वाले हैं,** जिसका **खाका कोरोना महामारी के दौरान ही खींचा जा चुका है। इसमें महिलाओं की अधिक से अधिक भागीदारी को प्राथमिकता देना होगा। साथ ही महिला उद्यमियों को सही तरीके से तैयार किए जाने की जरूरत है,** उनमें उद्यमिता की ऐसी **विशेषताएं और कौशल विकसित की जानी चाहिए, जिससे वे वैश्विक बाजारों के बदलते रुझानों की चुनौतियों से निपट सकें। तभी महिलाओं की श्रमबल में भागीदारी बढ़ेगी और महिलाओं का जीवन स्तर भी सुधरेगा। ऐसे सुधार असंभव नहीं** हैं, **बस इसके लिए मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति और सामाजिक सहयोग की आवश्यकता होगी,** जो अभी बेहद कम है।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 17-07-20

ईयू का साथ भी जरूरी

संपादकीय

पूर्वी लद्दाख में भारत और चीन की सेना के कोर कमांड़रों के बीच अपने-अपने सैनिकों को वापस लौटाने को लेकर हुई बातचीत के एक दिन बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने यूरोपीय संघ (ईयू) के अध्यक्ष चार्ल्स मिशेल से वास्तविक नियंत्रण रेखा की स्थितियों **को साझा किया। प्रधानमंत्री ने ईयू के अध्यक्ष से गलवान घाटी में पिछली** 15 जून को भारतीय और **चीनी सैनिकों के बीच हुई झड़पों से भी अवगत कराया,** जिनमें भारत के 20 **सैनिक शहीद हो गए थे। भारत और चीन के** बीच सीमा पर जारी तनाव को देख**ते हुए भारत और ईयू के इस पंद्रहवें शिखर सम्मेलन का व्यापारिक,** सामरिक और कूटनीतिक दृष्टि से विशेष महत्त्व **है। वास्तव में चीन बहुत ही आक्रामक युद्ध नीति और कूटनीति के जरिये दक्षिण** एशिया के क्षेत्र में धीरे-**धीरे अपने पांव पसार रहा है। पिछले मंगलवार को भारत और चीन की सेना के कोर कमांड़रों के** बीच करीब 15 घंटे तक वार्ता चली थी, **लेकिन चीनी कमांड़र पैंगोग त्से में फिंगर 8 से पीछे हटने को राजी नहीं हुए। चीन की इस कूटनीतिक चाल से यह पता चलता है कि उसकी कथनी और करनी में जमीन आसमान का अंतर है।** लिहाजा, भारत को चीन पर से **अपनी व्यापारिक निर्भरता कम करने के लिए ईयू और अमेरिका के साथ व्यापारिक रिश्ते और निवेश को बढ़ावा देना होगा।** ईयू के साथ-साथ भारत और अमेरिका की कंपनियों के सीईओ के बीच भी वार्ता हुई, जिसके तहत स्वास्थ्य, एयरो स्पेस, **रक्षा और बुनियादी ढांचा समेत अन्य क्षेत्रों में दोतरफा निवेश बढ़ाने के उपायों पर विचार किया गया। अच्छी बात यह है कि भारत और ईयू के बीच लंबे समय के बाद व्यापारिक रिश्तों को मजबूत करने**

के लिए सहमति बन गई है। दोनों पक्ष परमाणु, रक्षा, तकनीक, स्वास्थ्य और व्यापारिक संबंधों को और मजबूत करेंगे। प्रधानमंत्री मोदी ने शिखर सम्मेलन को संबोधित करते हुए कहा कि विश्व शांति और स्थायित्व के लिए भारत और ईयू के बीच मजबूत साझेदारी आवश्यक है। उन्होंने ईयू को भारत का नेचुरल पार्टनर बताया। शायद उनका आशय यह था कि एक तरह की राजनीतिक व्यवस्था वाले देश एक-दूसरे के ज्यादा करीब होते हैं। यूरोप के प्रायः सभी देश लोकतांत्रिक हैं। इसका एक आशय यह भी निकाला जा सकता है कि मोदी चीन की विस्तारवादी नीतियों के विरुद्ध सभी लोकतांत्रिक देशों को लामबंद करना चाहते हैं।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 17-07-20

साइबर असुरक्षा

संपादकीय

जैसे-जैसे साइबर संसार बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे वहां सुरक्षा की चिंताएं भी बढ़ती जा रही हैं। समय के साथ साइबर दुनिया जरूरी होती जा रही है, लेकिन उससे जुड़े भय भी कम होने का नाम नहीं ले रहे। जब पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा और सबसे सशक्त सॉफ्टवेयर कंपनी के संस्थापक बिल गेट्स के ट्विटर अकाउंट सुरक्षित नहीं हैं, तब बाकी अकाउंट्स की सुरक्षा का अनुमान मुश्किल नहीं है। इस तरह की साइबर हैकिंग से भले कोई बड़ा नुकसान हुआ न दिखता हो, पर इसने साइबर सुरक्षा व भरोसे में पहले से ही लगी सेंध को और चौड़ा तो कर ही दिया है। दरअसल, हम साइबर अपराध को अभी भी यथोचित गंभीरता से नहीं ले रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार, दुनिया में प्रति मिनट 29 लाख डॉलर का नुकसान साइबर अपराध की वजह से हो रहा है। साल 2017 के आंकडे बताते हैं कि प्रतिदिन साइबर दुनिया में करीब 7,80,000 दस्तावेज हेराफेरी या चोरी की भेंट चढ़े थे। ऐसा भी नहीं है कि साइबर सुरक्षा के काम में लगी एजेंसियां हाथ पर हाथ धरे बैठी हों। जैसे, करोड़ों की संख्या में पहुंच चुके एप्स में करीब 24,000 संदिग्ध एप्स प्रतिदिन बाधित किए जाते हैं, लेकिन ये कोशिशें ऊंट के मुंह में जीरा बराबर हैं। साल 2015 में तीन ट्रिलियन डॉलर साइबर अपराध की भेंट चढ़ गए थे और साल 2021 तक यह आंकड़ा छह ट्रिलियन डॉलर तक पहुंच जाएगा।

जिस तरह से साइबर दुनिया का विस्तार हो रहा है, उसी तरह से सुरक्षा उपायों और निगरानी तंत्र का विकास करना होगा। इस साल दुनिया भर में 300 अरब से ज्यादा पासवर्ड हो जाएंगे, बढ़ती संख्या के साथ उन्हें सुरक्षित रखने की चुनौती भी बढ़ती जाएगी। आए दिन किसी सोशल अकाउंट की हैकिंग मुख्यत: पासवर्ड की चोरी की वजह से ही संभव होती है। साइबर दुनिया के शातिर चोरों को पता है कि पासवर्ड का कौन-सा ताला कैसे खुल सकता है, इसलिए उनके लिए सरल पासवर्ड का अनुमान लगाना कठिन काम नहीं है। साइबर दुनिया में 21 फीसदी से ज्यादा फाइलें असुरक्षित हैं, उन पर किसी तरह का ताला नहीं है। आश्चर्य नहीं कि कंपनियों को तीन महीने बाद किसी डाटा या फाइल की चोरी का पता चलता है। जब व्यवस्थित कंपनियों को अपना डाटा सुरक्षित रखने में जोर आ रहा है, तब आम लोग कितने असुरक्षित होंगे, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। ओबामा और गेट्स जैसी हस्तियों पर हुए साइबर हमलों के बाद दुनिया को ईमानदारी से सोचना चाहिए।

सुगठित सरकारों, संगठित राजनीति व राजनेताओं पर भी खतरा बढ़ चुका है। साल 2017 में फ्रांसीसी राष्ट्रपति मैक्रों का ई-मेल हैक हो गया था और ऐसा चुनाव से कुछ ही पहले हुआ था। बहुत संभव है, इसका असर फ्रांस के चुनावों पर भी पड़ा हो। बहुत-सी हमारी बातें हैं, जिन्हें साइबर अपराधी हमसे कहीं ज्यादा जानते हैं। यह आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का एक और दुखद चेहरा है। दुर्भाग्य से साइबर अपराधी और डाटा चोरी को रोकना आसान नहीं है, क्योंकि नैतिकता का दावा करने वाली सरकारें भी अपने प्रतिस्पद्र्धियों से जुडे डाटा चुराने में गुरेज नहीं करतीं। ऐसे में, सजग सरकारों को अपने-अपने दायरे में साइबर सुरक्षा कवच तैयार करना चाहिए। पूरी हैकिंग को कठघरे में खड़ा करने की बजाय नैतिक हैकिंग को बढ़ावा देना और अनैतिक हैकिंग पर चोट करने की जरूरत बहुत बढ़ गई है।

Date: 17-07-20

पुराने रिश्तों पर भारी पड़ने लगी नई सियासत

नगमा सहर, टीवी पत्रकार व सीनियर फेलो, ओआरएफ

नेपाल और भारत के रिश्ते राजनीति और कूटनीति के दायरे से परे रहे हैं। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक रूप से जुडे दोनों देशों में रोटी और बेटी का पुराना नाता है। भारत और नेपाल के बीच नक्शे और एक सड़क को लेकर पहले ही तनाव है। ऐसे में, नेपाल के प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली के इस बयान ने आग में घी का काम किया है कि राम जन्मभूमि अयोध्या नेपाल में है। ओली का यह कहना कि भारत ने नेपाल की संस्कृति पर कब्जा कर लिया है, साफ दिखाता है, वह रिश्ते बिगाड़ने को तत्पर हैं। हालांकि इस बयान की नेपाल ही में काफी आलोचना हुई है।

तीखे बयानों से परे यह सच है कि आज भी भारत-नेपाल के हजारों लोग हर रोज व्यापार, रोजगार और कामकाज के लिए सीमा पार कर रहे हैं। अब भी भारत नेपाल का सबसे बड़ा कारोबारी पार्टनर है। नेपाल के कुल कारोबार में भारत का हिस्सा 60-65 प्रतिशत है। चूंकि दोनों देशों के बीच गहरे संबंध हैं, इसलिए मतभेद की बातें सुनकर चिंता भी ज्यादा है।

दरअसल, ओली राजनीतिक संकट में घिरे हुए हैं। नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी के दो धडे हो चुके हैं। पार्टी के अनेक वरिष्ठ नेता प्रधानमंत्री ओली के इस्तीफे पर अडे हुए हैं। ओली इस संकट से बचने के लिए कभी चीन की ओर देखते हैं, तो कभी भारत विरोधी राष्ट्रवाद का सहारा लेते हैं। बेशक, नेपाल की मौजूदा स्थिति में एक बड़ा खिलाड़ी चीन है। नेपाल में चीन की राजदूत हो यांकुई नेपाली राजनीति में जिस तरह सक्रिय हैं, वैसा आज तक राजनयिकों को करते नहीं देखा गया। नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी के दो धड़ों के बीच-बचाव में वह सीधे शामिल हैं। वह अनेक बड़े नेताओं और राष्ट्रपति से भी मिली हैं। यह नई कूटनीति है, तभी चीन के राजनयिकों के लिए एक नया शब्द बना है, 'वुल्फ वॉरियर्स'।

पैदा हो रहे बड़े खतरे को नेपाल शायद समझ नहीं पा रहा है। चीन के प्रति उसकी महत्वाकांक्षाएं बढ़ती जा रही हैं। पाकिस्तान तो चीन का सदाबहार दोस्त है, फिर भी सीपैक के तहत कर्ज के जाल में फंसने की चिंता पाकिस्तान में भी है। उधर, कंबोडिया के लाओस में हाई स्पीड रेल परियोजना में देश की आधी जीडीपी के बराबर खर्च हो चुका है। इसके बावजूद 2017 में नेपाल ने चीन के बेल्ट रोड परियोजना पर दस्तखत कर दिए। नेपाल और म्यांमार से जुड़ने के लिए चीन एक ट्रांस हिमालयन नेटवर्क बिछा रहा है। 2.75 अरब अमेरिकी डॉलर के ट्रांस हिमालयन नेटवर्क में नेपाल सहयोग

करेगा, जिसके तहत चीन के जिलोंग से काठमांडू तक एक सुरंगनुमा सड़क बनाई जाएगी। तिब्बत से काठमांडू तक एक रेल लाइन बिछाने की भी योजना है, जिसे पोखरा से बुद्ध के जन्मस्थान लुम्बिनी तक ले जाया जाएगा। चीन विकास की अलग-अलग परियोजनाओं के लिए नेपाल को 5,000 लाख अमेरिकी डॉलर देने के लिए हामी भर चुका है, ताकि नेपाल में उसकी आवाज बुलंद रहे। ओली ने साल 2018 में चीन की एक बड़ी कंपनी को बिना किसी औपचारिक प्रक्रिया के डिजिटल एक्शन रूम बनाने का प्रोजेक्ट दिया था। अक्तूबर 2019 में राष्ट्रपति जिनपिंग जब भारत आए थे, तब वह नेपाल होते हुए लौटे थे और नेपाल-चीन के रिश्तों को सामरिक दर्जा हासिल हुआ था। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी ने एक समझौते पर दस्तखत किए हैं, जिसके तहत कम्युनिस्ट विचारधारा के प्रशिक्षण और विकास के मॉडल को साझा करने के लिए दोनों तैयार हैं।

इन तथ्यों को देखें, तो यह बात साफ हो जाती है कि भारत राजनयिक जमीन पर पिछड़ रहा है। इसमें भारत की अपनी चूक भी है। भारत और नेपाल ने सीमा विवाद को वर्षों तक छोडे रखा। सीमा को लेकर नेपाल व चीन के बीच भी विवाद है, पर नेपाल की वर्तमान सत्ता भारत के साथ सीमा विवाद को हवा देने में अपना फायदा देख रही है। वैसे, राणाशाही के दौर से ही नेपाल अपने दोनों बडे पड़ोसियों, भारत व चीन के बीच संतुलन बनाकर चलता रहा है। वह दोनों से फायदा उठाने की कोशिश करता रहा है। पूर्व विदेश सचिव श्याम सरन लिखते हैं कि राजा महेंद्र और बीरेंद्र भी भारत विरोधी भावना भड़काकर अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करते थे। अब ओली चीन से आस लगाए हुए हैं, लेकिन चीन का हस्तक्षेप खुद नेपाल के लोकतंत्र के लिए कितना घातक साबित होगा, यह सबसे बड़ा सवाल है।